चिंतन (Thinking) : अर्थ और परिभाषा

1. चिंतन का अर्थ (Meaning of Thinking)

चिंतन एक **मानसिक प्रक्रिया (mental process)** है जिसके द्वारा व्यक्ति किसी समस्या, स्थिति, घटना या अनुभव के बारे में विचार करता है, उनका विश्लेषण करता है और किसी निष्कर्ष या समाधान तक पहुँचता है।

दूसरे शब्दों में, जब हम अपने मन में किसी विषय पर सोचते हैं, तर्क करते हैं, तुलना करते हैं, निर्णय लेते हैं या कल्पना करते हैं, तो उस पूरी मानसिक क्रिया को **चिंतन** कहा जाता है।

चिंतन प्रत्यक्ष रूप से दिखाई नहीं देता, क्योंकि यह मन के भीतर होने वाली आंतरिक प्रक्रिया है। इसे हम व्यक्ति के व्यवहार, निर्णय और समस्या-समाधान के माध्यम से समझ सकते हैं।

सरल शब्दों में

जब मन किसी प्रश्न का उत्तर खोजता है,
किसी समस्या का हल ढूँढ़ता है,
या किसी बात पर विचार करता है —
तो वह प्रक्रिया चिंतन कहलाती है।

---

2. चिंतन की मनोवैज्ञानिक विशेषताएँ

मनोविज्ञान के अनुसार चिंतन की कुछ मुख्य विशेषताएँ होती हैं —

1. यह एक **उद्देश्यपूर्ण (goal-directed)** प्रक्रिया है।
2. यह सामान्यतः किसी समस्या या जिज्ञासा से प्रारम्भ होती है।
3. इसमें स्मृति, कल्पना, तर्क और निर्णय जैसी मानसिक क्रियाएँ शामिल होती हैं।
4. यह प्रतीकों (symbols), शब्दों (words) और अवधारणाओं (concepts) के माध्यम से संचालित होती है।

चिंतन की परिभाषाएँ (Definitions of Thinking)

विभिन्न मनोवैज्ञानिकों ने चिंतन की अलग-अलग परिभाषाएँ दी हैं। नीचे कुछ प्रमुख परिभाषाएँ सरल हिन्दी में दी जा रही हैं —

---

(1) सामान्य परिभाषा

चिंतन वह मानसिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति समस्या का समाधान खोजता है और निर्णय तक पहुँचता है।

---

(2) मनोवैज्ञानिक परिभाषा

चिंतन एक ऐसी आंतरिक मानसिक क्रिया है जिसमें व्यक्ति प्रतीकों, शब्दों और अवधारणाओं का उपयोग करके विचार करता है।

---

(3) समस्या-समाधान आधारित परिभाषा

जब व्यक्ति किसी कठिनाई या समस्या का सामना करता है और उसके समाधान के लिए मानसिक रूप से विचार-विमर्श करता है, तो उस प्रक्रिया को चिंतन कहा जाता है।

---

(4) उद्देश्यपूर्ण प्रक्रिया के रूप में

चिंतन एक उद्देश्यपूर्ण मानसिक प्रक्रिया है, जो व्यक्ति को उचित निर्णय लेने और समस्या सुलझाने में सहायता करती है।

मनोवैज्ञानिक दृष्टि से चिंतन का महत्व

मनोविज्ञान में चिंतन को उच्च स्तरीय संज्ञानात्मक प्रक्रिया (higher cognitive process) माना जाता है।

यह व्यक्ति की —

- बुद्धि (intelligence)
- तर्क शक्ति (reasoning ability)
- निर्णय क्षमता (decision making)
- सृजनात्मकता (creativity)

से जुड़ा होता है।

चिंतन के बिना व्यक्ति —

- सही निर्णय नहीं ले सकता
- समस्याओं का समाधान नहीं कर सकता
- भविष्य की योजना नहीं बना सकता

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में चिन्तन (Thinking) – सरल व्याख्या

चिन्तन (Thinking) मनोविज्ञान का एक बहुत ही महत्वपूर्ण विषय है। लगभग हर व्यक्ति "सोचने" या "विचार करने" का अर्थ सामान्य जीवन में समझता है। हम रोज़मर्रा की बातचीत में कहते हैं – "मैं सोच रहा हूँ", "तुमने क्या सोचा?", "इस पर विचार करो" आदि। इन स्थितियों में हमें चिन्तन का अर्थ समझने में कोई कठिनाई नहीं होती।

लेकिन जब हम चिन्तन को **वैज्ञानिक दृष्टि** से समझने की कोशिश करते हैं, तब यह विषय थोड़ा जटिल हो जाता है। जैसा कि मनोवैज्ञानिक Bourne ने कहा है – *"जितना हम इसका अध्ययन करते हैं, यह उतना ही अधिक अस्पष्ट या धुंधला होता जाता है।"* इसका अर्थ है कि चिन्तन को गहराई से समझने पर हमें पता चलता है कि यह एक बहुत जटिल मानसिक प्रक्रिया है।

---

1. सामान्य अर्थ और वैज्ञानिक अर्थ में अंतर

दैनिक जीवन में हम चिन्तन को बहुत सरल अर्थ में लेते हैं — जैसे किसी समस्या पर विचार करना, निर्णय लेना, योजना बनाना या कल्पना करना।

परन्तु मनोविज्ञान में चिन्तन को केवल साधारण सोचने की क्रिया नहीं माना जाता, बल्कि यह एक **वैज्ञानिक संकल्पना (concept)** है। इसका अध्ययन प्रयोगों, निरीक्षण और शोध के माध्यम से किया जाता है।

यही वह स्थान है जहाँ कठिनाई उत्पन्न होती है। सामान्य जीवन में हमें चिन्तन के अर्थ में कोई भ्रम नहीं होता, लेकिन वैज्ञानिक रूप में इसे परिभाषित करना और मापना आसान नहीं है।

---

2. चिन्तन का मानसिक इतिहास

चिन्तन का इतिहास बहुत पुराना और विविध प्रकार का है। प्राचीन काल से ही मनुष्य यह जानना चाहता था कि वह कैसे सोचता है, उसके मन की संरचना क्या है, और मानसिक प्रक्रियाएँ कैसे काम करती हैं।

Wolman के अनुसार, एक समय चिन्तन को मनोविज्ञान की **केन्द्रीय समस्या (central problem)** माना जाता था। अर्थात् मनोविज्ञान का मुख्य उद्देश्य ही यह समझना था कि मन कैसे काम करता है और विचार कैसे उत्पन्न होते हैं।

प्रारंभिक मनोविज्ञान के मुख्य लक्ष्य थे:

- मनुष्य के मानसिक विकास को समझना
- मन की संरचना का अध्ययन करना
- मानसिक क्रियाओं (जैसे सोच, स्मृति, कल्पना आदि) का विश्लेषण करना

इन्हीं उद्देश्यों के कारण मनोविज्ञान एक स्वतंत्र विज्ञान के रूप में स्थापित हुआ।

---

3. कठिनाइयाँ और मतभेद

हालाँकि ऊपर से ये प्रश्न बहुत सरल दिखाई देते हैं — जैसे "मन क्या है?" या "विचार कैसे बनते हैं?" — लेकिन इनका सही और स्पष्ट उत्तर देना हमेशा कठिन रहा है।

प्रारंभ में चिन्तन को व्यक्ति की **आंतरिक क्रिया (internal process)** माना गया। यह माना गया कि विचार व्यक्ति के मन के अंदर होते हैं और उन्हें सीधे देखा नहीं जा सकता।

समस्या यह थी कि:

- अलग-अलग मनोवैज्ञानिक चिन्तन की अलग-अलग परिभाषा देते थे।
- शोध के परिणाम एक जैसे नहीं आते थे।
- विचारों को प्रत्यक्ष रूप से मापा नहीं जा सकता था।

इन कारणों से चिन्तन को एक स्पष्ट और ठोस वैज्ञानिक समस्या के रूप में स्थापित करना कठिन हो गया।

---

4. व्यवहारवाद का प्रभाव

बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में मनोविज्ञान में **व्यवहारवाद (Behaviorism)** का उदय हुआ। इस विचारधारा ने चिन्तन के अध्ययन को लगभग अस्वीकार कर दिया।

व्यवहारवादियों का मानना था कि:

- विज्ञान में केवल वही चीज़ें अध्ययन योग्य हैं जिन्हें **देखा और मापा** जा सके।
- चिन्तन एक **व्यक्तिगत (private) प्रक्रिया** है।

- इसे केवल वही व्यक्ति जान सकता है जो सोच रहा है।

इसलिए व्यवहारवादियों ने कहा कि ऐसे आंतरिक अनुभवों का अध्ययन वैज्ञानिक ढंग से नहीं किया जा सकता।

---

5. Watson का दृष्टिकोण

व्यवहारवाद के प्रमुख प्रवर्तक **Watson** थे। उन्होंने मनोविज्ञान को एक पूर्णत: वस्तुनिष्ठ (objective) विज्ञान बनाने का प्रयास किया।

Watson का मानना था कि:

- मनोविज्ञान को केवल **उद्दीपक (Stimulus)** और **अनुक्रिया (Response)** के संबंध का अध्ययन करना चाहिए।
- अन्तर्दर्शन (introspection) जैसी विधियाँ अवैज्ञानिक हैं।
- हमें केवल बाहरी, दिखाई देने वाले व्यवहार का अध्ययन करना चाहिए।

इस दृष्टिकोण के कारण मनुष्य और पशु को एक प्रकार से "खाली बॉक्स" (Empty Box) की तरह माना गया। यानी उनके अंदर क्या चल रहा है, यह महत्वपूर्ण नहीं है; महत्वपूर्ण है केवल बाहरी व्यवहार।

---

6. परिणाम

व्यवहारवाद के प्रभाव के कारण चिन्तन जैसे आंतरिक मानसिक विषयों का अध्ययन कुछ समय के लिए कम हो गया।

लेकिन समय के साथ मनोवैज्ञानिकों ने महसूस किया कि केवल बाहरी व्यवहार से मानव व्यवहार को पूरी तरह नहीं समझा जा सकता। मनुष्य के निर्णय, समस्या समाधान, भाषा, रचनात्मकता आदि को समझने के लिए चिन्तन का अध्ययन आवश्यक है।

इसी कारण बाद में संज्ञानात्मक मनोविज्ञान (Cognitive Psychology) का विकास हुआ, जिसने पुनः चिन्तन को मनोविज्ञान के केन्द्र में ला दिया

आधुनिक दृष्टिकोण में चिन्तन की व्याख्या – सरल रूप में

जब मनोविज्ञान में व्यवहारवाद (Behaviorism) का प्रभाव कम होने लगा, तब मानसिक प्रक्रियाओं को एक नए रूप में समझा जाने लगा। अब मनोवैज्ञानिक यह मानने लगे कि केवल बाहरी व्यवहार ही महत्वपूर्ण नहीं है, बल्कि उसके पीछे काम करने वाली **मानसिक प्रक्रियाएँ** भी उतनी ही महत्वपूर्ण हैं।

इस नए दृष्टिकोण में मानसिक क्रियाओं को व्यवहारवादी सिद्धांत का एक महत्वपूर्ण हिस्सा माना गया। अर्थात् अब यह समझा गया कि व्यक्ति का व्यवहार केवल बाहरी उद्दीपकों (stimuli) से नहीं बनता, बल्कि उसके भीतर भी कुछ प्रक्रियाएँ काम करती हैं।

इसी कारण आधुनिक मनोवैज्ञानिक "निहित व्यवहार" (covert behavior) को महत्व देते हैं। निहित व्यवहार का अर्थ है — वह व्यवहार या मानसिक प्रक्रिया जो बाहर से दिखाई नहीं देती, जैसे सोचना, कल्पना करना, योजना बनाना आदि। इन्हें चिन्तन का आधार माना गया।

हल्ल का योगदान

प्रसिद्ध अधिगम सिद्धांतवादी **Clark L. Hull** ने इस दिशा में महत्वपूर्ण प्रयास किया। पहले व्यवहारवाद में व्यवहार को केवल **उद्दीपक-अनुक्रिया (Stimulus–Response या S–R)** के रूप में समझा जाता था।

अर्थात्:

- कोई उद्दीपक (Stimulus) आता है
- उसके उत्तर में व्यक्ति अनुक्रिया (Response) करता है

लेकिन हल्ल ने महसूस किया कि यह मॉडल बहुत सरल है और इससे जटिल परिस्थितियों को समझाना संभव नहीं है। इसलिए उन्होंने इसे बदलकर **उद्दीपक–प्राणी–अनुक्रिया (Stimulus–Organism–Response या S–O–R)** का रूप दिया।

यहाँ "प्राणी" (Organism) का अर्थ है — व्यक्ति के अंदर चलने वाली मानसिक और शारीरिक प्रक्रियाएँ।

इस परिवर्तन का उद्देश्य यह था कि उद्दीपक और अनुक्रिया के बीच जो आंतरिक प्रक्रियाएँ होती हैं, उन्हें भी महत्व दिया जाए।

समस्यात्मक परिस्थितियों की व्याख्या

हल्ल का मानना था कि कई बार व्यक्ति ऐसी समस्यात्मक परिस्थितियों में होता है, जहाँ साधारण S–R मॉडल पर्याप्त नहीं होता।

उदाहरण के लिए — **Detour Problem (अप्रत्यक्ष पथ समस्या)**

मान लीजिए किसी व्यक्ति या पशु को लक्ष्य तक पहुँचने के लिए एक रास्ता दिया गया है। यदि उस रास्ते में अचानक कोई बाधा आ जाए और वह रास्ता बंद हो जाए, तो वह क्या करेगा?

यदि केवल S–R सिद्धांत को मानें, तो व्यक्ति केवल उसी सीखी हुई अनुक्रिया को दोहराएगा। लेकिन वास्तविक जीवन में ऐसा नहीं होता। व्यक्ति रुकता है, सोचता है, और फिर कोई दूसरा रास्ता खोजकर लक्ष्य तक पहुँचने की कोशिश करता है।

इसका अर्थ है कि:

- उद्दीपक मिलने के बाद
- व्यक्ति के भीतर कोई आंतरिक प्रक्रिया चलती है
- वह स्थिति का मूल्यांकन करता है
- फिर नई अनुक्रिया चुनता है

इससे स्पष्ट है कि उद्दीपक और अनुक्रिया के बीच एक **आंतरिक क्रियातंत्र (internal mechanism)** काम करता है।

मध्यस्थताकारी क्रियातंत्र (Intervening Mechanism)

इसी को समझाने के लिए हल्ल ने "मध्यस्थताकारी अनुक्रिया" या "Intervening Mechanism" की संकल्पना प्रस्तुत की।

पहले व्यवहारवादी दृष्टिकोण में मनुष्य को एक "खाली बॉक्स" (Empty Box) की तरह माना जाता था। यानी उद्दीपक अंदर गया और अनुक्रिया बाहर आई — बीच में क्या हुआ, यह महत्वपूर्ण नहीं था।

लेकिन हल्ल ने कहा कि यह बॉक्स वास्तव में खाली नहीं है। इसके अंदर कई मानसिक और जैविक प्रक्रियाएँ चलती हैं। ये प्रक्रियाएँ उद्दीपक और अनुक्रिया के बीच **मध्यस्थ (mediator)** का काम करती हैं।

अर्थात्:
उद्दीपक → आंतरिक प्रक्रिया (मध्यस्थताकारी तंत्र) → अनुक्रिया

इस प्रकार हल्ल ने "खाली बॉक्स" को आंतरिक क्रियातंत्रों से भर दिया।

एक उद्दीपक से अनेक अनुक्रियाएँ

कई बार ऐसा होता है कि एक ही उद्दीपक से अलग-अलग प्रकार की अनुक्रियाएँ उत्पन्न होती हैं।

उदाहरण के लिए:
यदि परीक्षा का परिणाम घोषित हो —

- कोई छात्र खुश हो सकता है
- कोई चिंतित हो सकता है
- कोई भविष्य की योजना बनाने लग सकता है

यदि केवल S–R सिद्धांत सही होता, तो एक ही उद्दीपक से एक ही प्रकार की अनुक्रिया होती।

लेकिन वास्तविकता में अलग-अलग व्यक्ति अलग-अलग प्रतिक्रिया देते हैं। इसका कारण यह है कि प्रत्येक व्यक्ति के भीतर अलग-अलग मानसिक प्रक्रियाएँ, अनुभव, प्रेरणाएँ और भावनाएँ कार्य करती हैं।